तात्पर्य

श्रीभगवान् का कथन है कि सम्पूर्ण सृष्टि उन पर आश्रित है। इसका अर्थ अन्यथा नहीं समझना चाहिए। प्राकृत सृष्टि के पालन-पोषण से श्रीभगवान् का सीधा सम्बन्ध नहीं है। चित्र में पृथ्वी को स्कन्धों पर उठाए हुए ग्रीक देवता एटलस इस बृहत्काय लोक के भार से अति श्रान्त प्रतीत होता है। श्रीकृष्ण ब्रह्माण्ड को इस प्रकार धारण नहीं करते। उनका कहना है कि यद्यपि सब कुछ उन्हीं के आश्रय में है, तथापि वे सृष्टि से बिल्कुल असंग हैं। लोक-समूह अन्तरिक्ष में विचरण कर रहे हैं। यह अन्तरिक्ष भी एक भगवत्-शक्ति है, परन्तु श्रीभगवान् इससे भिन्न हैं। उनका अपना निजी स्वरूप है। इसी कारण उन्होंने कहा है कि, 'यद्यपि ये सब रचित पदार्थ मेरी अचिन्त्य शक्ति में स्थित हैं, पर भगवान् के रूप में मैं इन सबसे असंग (अतीत) हूँ।' यही श्रीभगवान् का अचिन्त्य वैभव है।

वेद में उल्लेख है, 'अपनी शक्ति के विलास को प्रकट करते हुए श्रीभगवान् अद्भुत अचिन्त्य लीलामृत का परिवेषण कर रहे हैं। वे विविध शक्तियों से सम्पन्न एवं सत्यसंकल्प हैं। श्रीभगवान् के तत्त्व को इसी प्रकार जानना चाहिए।' हम कितने ही कार्य करना चाहते हैं, परन्तु मार्ग में इतने अधिक व्यवधान आते रहते हैं कि कभी-कभी तो इच्छा को कार्यरूप देना असम्भव सा हो जाता है। परन्तु जब श्रीकृष्ण को कोई कार्य करना अभीष्ट होता है, तो उनके संकल्पमात्र से सब कार्य ऐसी कुशलता से पूर्ण हो जाता है, जिसकी हम कल्पना भी नहीं कर सकते। श्रीभगवान् ने इसी सत्य का वर्णन किया है—वे सम्पूर्ण सृष्टि का धारण-पोषण करते हैं, परन्तु इसका स्पर्श नहीं करते। उनकी परम बलवती इच्छा-शक्ति के द्वारा ही सम्पूर्ण सृष्टि का सृजन, धारण, पालन एवं संहार होता है। हमारे प्राकृतचित्त और स्वयं हममें भेद है, जबकि उनके चित्त और उनमें अभेद है, क्योंकि वे अद्वय-चेतन हैं। श्रीभगवान् एक साथ सर्वव्यापक भी हैं और अपने निजी स्वरूप में भी हैं। सामान्य मनुष्य इस तत्त्व को बिल्कुल नहीं समझ सकता। प्रभु इस सृष्टि से भिन्न हैं, पर सब कुछ उन्हीं के आश्रित है—इसी अचिन्त्य सत्य को यहाँ **योगैश्वरम्**—श्रीभगवान् की योगशक्ति कहा गया है।

यथाकाशस्थितो नित्यं वायुः सर्वत्रगो महान्।
तथा सर्वाणि भूतानि मत्स्थानीत्युपधारय।।६।।

यथा=जैसे; **आकाशस्थितः**=आकाश में स्थित; **नित्यम्**=सदा-सर्वदा; **वायुः**=पवन; **सर्वत्रगः**=सर्वत्र विचरणशील; **महान्**=महान्; **तथा**=वैसे ही; **सर्वाणि**=सब; **भूतानि**=प्राणी; **मत्स्थानि**=मुझ में स्थित हैं; **इति**=इस प्रकार; **उपधारय**=जान।

अनुवाद

जैसे सब ओर विचरणशील वायु नित्य आकाश में स्थित रहता है, वैसे ही सम्पूर्ण प्राणियों को मुझ में स्थित जान।।६।।